आधार सुरक्षा जरूरी

आधार परियोजना दुनिया की सबसे बड़ी बायोमेट्रिक डिजिटल पहचान प्रणाली है और इसके अंतर्गत भारत में निवास करनेवाले 90 फीसदी से अधिक लोग पंजीकृत हैं. कई महत्वपूर्ण सेवाओं से लोगों की आधार संख्या जुड़ी हुई है. ऐसे में डेटा सुरक्षा और पंजीकृत लोगों की निजता की सुरक्षा का प्रश्न हमेशा चर्चा में रहता है. पिछले साल सितंबर में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय के बाद ऐसा लगा था कि सुरक्षा को लेकर अब निश्चिंत हुआ जा सकता है, परंतु स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने आधार डेटा के दुरुपयोग के मामले लाकर इस मुद्दे को फिर बहस के घेरे में ला दिया है. आधार प्राधिकरण की ओर से बैंकों को आधार पंजीकरण का लक्ष्य दिया गया है. इसके तहत पंजाब, जम्मू-कश्मीर, हरियाणा और चंडीगढ़ में स्टेट बैंक द्वारा काम पर लगाये गये वेंडरों के डेटा का इस्तेमाल कर फर्जी पंजीकरण करने और खाते से पैसा निकालने के मामले सामने आये हैं. हालांकि, प्राधिकरण ने बैंक के इस आरोप को खारिज कर दिया है, पर इस मसले पर गंभीरता से विचार जरूरी है. डेटा के अनधिकृत उपयोग और इसे अवैध तरीके से निकालने का एक मुकदमा दिल्ली हाइकोर्ट में चल रहा है. आधार कानून में संशोधन करने का विधेयक भी संसद में विचाराधीन है. सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद कुछ बदलाव की जरूरत है, पर अनेक जानकारों ने यह भी रेखांकित किया है कि इसमें डेटा और निजता की सुरक्षा के लिए मजबूत प्रावधान नहीं हैं. भारत में डिजिटल फर्जीवाड़े और हैकिंग की घटनाएं बढ़ रही हैं. पिछले साल के मध्य में आये आंकड़ों के मुताबिक साल 2011 के बाद से आधार से जुड़ी ऐसी 164 घटनाएं हो चुकी हैं, जिनमें ज्यादातर 2018 में घटी हैं. इनमें अनेक मामले बैंकिंग धोखाधड़ी के हैं. डिजिटल लेन-देन की ओर बढ़ती हमारी आर्थिकी के लिए यह बहुत चिंताजनक है, क्योंकि अन्य तरीकों- फोन से सूचनाएं लेना, सिम कार्ड व एटीएम कार्ड की नकल, ऑनलाइन खातों की हैंकिंग आदि, से लोगों के खाते से निकासी और फर्जी कागजातों के आधार पर कर्ज लेने के मामलों से बैंक और उपभोक्ता पहले से ही बहुत परेशान हैं. सरकार और बैंकों ने अपने स्तर पर सुरक्षा सुनिश्चित करने के कुछ उपाय जरूर किये हैं, पर व्यापक नीतिगत पहल की कमी बनी हुई है. संशोधन विधेयक में आधार निर्देशों की अवहेलना करनेवाली कंपनियों पर आर्थिक दंड लगाने का प्रावधान सराहनीय है, लेकिन सरकार को उन चिंताओं पर भी ध्यान देना चाहिए, जिनमें कहा गया है कि इस विधेयक से सुप्रीम कोर्ट के कुछ निर्देश प्रभावहीन हो जायेंगे. डेटा सुरक्षा के दो अहम हिस्से हैं. एक तो यह राष्ट्रीय सुरक्षा और अर्थव्यवस्था से जुड़ा हुआ है और दूसरा यह कि अक्सर निम्न और मध्य आयवर्गीय लोग डेटा में सेंधमारी का शिकार होते हैं. आधार प्रणाली को अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिए उसकी सुरक्षा की लगातार समीक्षा होती रहनी चाहिए तथा आवश्यक कानूनी और तकनीकी उपाय किये जाते रहने चाहिए.

आधार प्रणाली को अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिए उसकी सुरक्षा की लगातार समीक्षा होती रहनी चाहिए.

खुद की अदालत में मीडिया

मृणाल पांडे
ग्रुप सीनियर एडिटोरियल एडवाइजर, नेशनल हेराल्ड
mrinal.pande@gmail.com

हमारे साहित्य या मीडिया में खुद अपने भीतरी जीवन की सच्चाई जिक्री तौर से ज्यादा, फिक्री तौर से कम आती है. मसलन दर्शक-पाठक भली तरह जान चुके हैं कि मीडिया के भीतर कैसी मानवीय व्यवस्थाएं हैं, खबरें कैसे जमा या ब्रेक होती हैं. पत्रकारों के बीच एक्सक्लूसिव खबर देने के लिए कैसी तगड़ी स्पर्धा होती है. लेकिन, पिछले दो दशकों में उपन्यासों, कहानियों या मीडिया पर लिखे जानेवाले कॉलमों में भाषा और कथ्य के बदलाव की आहटें कम ही दिखती हैं. पिछले साल भी टीवी चैनलों-अखबारों में लोकप्रिय मीडियाकरों द्वारा दल विशेष के नेता विशेष के रासो शैली के कसीदे पढ़ने और साहित्य क्षेत्र में मीडिया कर्मियों के जीवन की आश्चर्यजनक रूप से कस्बाती, लेकिन भावुक किस्म की प्रेम-गाथाएं खूब छायी रहीं. राजनीति और प्रेम, छोटे शहर से बड़े शहर तक आने के सफर जैसे विषयों पर अनेक मीडियाकरों की किताबें काफी धूम-धड़ाके से विमोचित की गयीं. काफी बिकीं, ऑनलाइन पढ़ी गयीं और साहित्योत्सवों में बहसियायी भी गयीं. फिर भी मीडिया को गंभीरता से लेनेवालों के लिए बड़े महत्व की कई बातें अनकही ही रह गयीं.

मीडिया की मालिकी अब गिने-चुने चार-पांच औद्योगिक घरानों के हाथों में सिमट कर रह गयी है. लोकल चैनल, लोकल अखबार या क्षेत्रीय भाषाएं-बोलियां मुख्यधारा मीडिया से बाहर हो रही हैं. उनकी जगह एक सपाट किस्म की भाषा ने ले ली है, जो खबरें भड़काऊ तरह से बेचती है. उपभोक्ता को वह तटस्थ ईमानदार सूचना और खबरों के सबूत या स्रोत नहीं देती. खबर की तह तक जाने का दर्शक-पाठकों का धीरज डिजिटल मीडिया ने खत्म कर दिया है. आज औसत शहरी खबर उपभोक्ता एक चलंत भीड़ का हिस्सा है. यह भीड़ तकिये की टेक लेकर मनोयोग से अखबार या किताबें नहीं पढ़ती. अमूमन मोबाइल पर खबरों के अंश देख कर और किताबों के रिव्यू पढ़ कर ही जानकार बन जाता है.

यह अब कहना ही होगा कि अपने करोड़ों पाठकों-दर्शकों की पीठ पीछे मीडिया मालिकान और राजनीतिक नेतृत्व के हित स्वार्थों के बीच पिछले पांच सालों में एक अजीब गठजोड़ बन गया है. इस गठजोड़ की मूल चिंताएं मुनाफाकमाई और राजनीतिक प्रचार से जुड़ी हुई हैं. इन दोनों जरूरतों ने अभिव्यक्ति की दुनिया से कथ्य और नैतिकता के तकाजों ही नहीं, अभिव्यक्ति की आजादी, आलोचना और जनसंवाद की परिभाषा को भी डिजिटल तकनीकों की मार्फत सिरे से बदल दिया है. मीडिया और साहित्य का ज्ञानात्मक संवेदना और नैतिक अनुभूति देने का काम अब दीगर हो गया है. इससे मीडिया का सामाजिक तौर से एक बहुत महत्वपूर्ण काम छूट गया है. नया मीडिया और साहित्यिक उत्पाद अब अधिक स्मार्ट तरीके से जनता को सामाजिकता से काट कर उसे अपने ही हित-स्वार्थों के संदर्भ में सोचने को बाध्य करने लगे हैं.

> ताबड़तोड़ हुए तमाम राजनीतिक बदलावों, फैसलों और सरकार के आगे अधिकतर मीडिया समूहों की सामूहिक मत्थाटिकाई ने आज पत्रकारिता के क्षेत्र को परिधिविहीन बना डाला है.

यह सच है कि संपादकों, रिपोर्टरों या लेखकों (जिनमें नयी फिल्मों के पटकथा लेखक भी शुमार हैं) का हमेशा एक वर्ग रहा है, जिसने पुराने कथ्य या फॉर्म को नाकाफी माना और उनमें तमाम तरह के नये प्रयोग किये हैं. ऐसा भी नहीं कि इन लोगों द्वारा पुरअसर साहित्य या रपटें नहीं रची गयीं, लेकिन कहीं-न-कहीं अधिकतर मीडिया और साहित्यकारों द्वारा हमको सोचने पर मजबूर करने की बजाय राहत महसूस कराना और यथास्थिति से समझौता कराने को प्रेरित करना खतरनाक है. ईमानदारी से सोचें, तो हाल के दिनों में राजनीति या इतिहास पर जो फिल्में बनी भी हैं, उनमें से पद्मावत या मणिकर्णिका या उरी या एन एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर, ने अंततः हमें समकालीन भारतीय स्थिति पर क्या कुछ भी नया विचार या दिशा-निर्देश दिया?

मीडिया आज जागरूक जनता के बीच खुद कई सवालों के कठघरे में खड़ा है. देश की तीन शीर्ष संस्थाओं- एडिटर्स गिल्ड ऑफ इंडिया, वीमेंस प्रेस कोर तथा प्रेस क्लब ने अपने हमपेशा लोगों के साथ राजनीति या मीडिया की चंद बड़े कॉर्पोरेट हाथों में जा चुकी मिल्कियत और उसके कॉर्पोरेट हितों से उसको विचारधारा विशेष को झुकानेवाला राजनीति का पिछलग्गू इंजन बनते जाने, के सामयिक सवाल पर समवेत चर्चा की क्या इधर कोई प्रशंसनीय पहल की?

यह सही है कि गहरी स्पर्धा के युग में ताबड़तोड़ जटिल स्टोरी का पीछा करते हुए एक पत्रकार को हर तरह के लोगों से मिलना होता है. पर दलील दी जाये कि पत्रकार अगर दोस्ती का चरका देकर किसी ऐसे महत्वपूर्ण स्रोत से संपर्क साधेगा ही, जो कॉर्पोरेट घरानों का ज्ञात और भरोसेमंद प्रवक्ता तथा राजनीतिक दलों से उनके हित साधन का जरिया भी हो, तो क्या यह पत्रकार के प्रोफेशनल होने का प्रमाण माना जाए?

चुनाव पास हों, तो भीतरी उठा-पटक और भी गहराने लगती है. बजट से लेकर सार्वजनिक संसाधनों के आवंटन तक से जुड़ी अहम सरकारी फैसलों की धारा मीडिया के जजमानों के हित में मुड़वाने के लिए कौन नेता, अफसर या पत्रकारिता दिग्गज उनको मदद देगा और बदले में क्या पायेगा, इसकी सबको खूब परख होती है. रिपोर्टिंग के लिए बार-बार सम्मानित पत्रकार इन सच्चाइयों व धंधई लक्ष्मण रेखाओं से अनजान हैं, यह मानना असंभव है. बेहतर हो कि विनम्रता से मान लें कि उनसे गलती हुई है और उससे वे सबक लेंगे.

अभी उत्तर प्रदेश के खदान आवंटन मामले में एक बड़े पत्रकार का नाम उछला है, जिनकी धूमकेतु सफलता का रहस्य उनके द्वारा हर सत्तावान राजनीतिक दल को विस्मयकारी रूप से खुश रखने की दक्षता माना जाता है. हमारे संविधान का अनुच्छेद-19 मीडिया ही नहीं, सभी देशवासियों को अभिव्यक्ति की आजादी का हक देता है, वह यह नहीं कहता कि आप अमुक चैनल या अखबार के समूह संपादक और कई लाभकारी सूत्रों से संपर्क रखनेवाले हैं, तो आपको अपनी इच्छानुसार सरकारी पक्षधरता या कंपनी हितों की रक्षा का दूसरों से बड़ा हक प्राप्त हो जाता है. ताबड़तोड़ हुए तमाम राजनीतिक बदलावों, फैसलों और सरकार के आगे अधिकतर मीडिया समूहों की सामूहिक मत्थाटिकाई ने आज पत्रकारिता के क्षेत्र को परिधिविहीन बना डाला है. सभी हिंदी पत्रकार धंधई उसूलों को तोड़ने के दोषी भले न हों, पर उनके लिए भी चुनाव की पूर्वसंध्या सरकारी विज्ञापनों से मालामाल होकर अपनी पीठ थपथपाने की बजाय तटस्थ आत्मपरीक्षण की घड़ी होनी चाहिए.

खत्म हो चेहरे की राजनीति

मनींद्र नाथ ठाकुर
एसोसिएट प्रोफेसर, जेएनयू
manindrat@gmail.com

चुनाव आते ही भारतीय राजनीति में उबाल आ जाता है. जनता कोशिश करती है कि उसके प्रतिनिधियों को पता चले कि उसकी समस्याएं क्या हैं और राजनेता कोशिश करते हैं कि जनता का ध्यान धर्म, जाति, चमत्कारी व्यक्तित्व की ओर लगा रहे. आप आज भी यह संघर्ष देख सकते हैं. देश में किसान की हालात खराब है, आत्महत्याएं हर सरकार में होती रहती हैं. हमारे पास कोई साफ दृष्टि नहीं है इस समस्या को हल करने की. उसकी मांगों को दरकिनार कर मीडिया और पार्टियां केवल कर्जमाफी तक ही उसे समेट देती हैं. फिर बहस होती है कि कर्ज माफ करना कितना मुश्किल है. नौकरियां नहीं हैं, शिक्षा को निजी क्षेत्रों की चारागाह बनाया जा रहा है. छात्रों के विरोध को राष्ट्रद्रोह कह दिया जाता है. और इन सबके बदले राजनेता क्या करते हैं? या तो जुमलों का व्यापार या फिर चेहरों की राजनीति!

कांग्रेस पार्टी ने इस बार तय किया है कि राहुल गांधी की अध्यक्षता में उनकी बहन पार्टी में महत्वपूर्ण पद पर रहेंगी और उत्तर प्रदेश के एक खास क्षेत्र का नेतृत्व करेगी. निश्चित रूप से वह कोई मामूली कार्यकर्ता नहीं हैं, बल्कि एक प्रभावशाली व्यक्तित्व दिखती हैं. राजनीति में उनकी नेतृत्व क्षमता कितनी है, यह तो अभी नहीं मालूम, लेकिन लोगों का अनुमान है कि इसका व्यापक प्रभाव कांग्रेस के कार्यकर्ताओं पर पड़ेगा. ऐसा क्यों है, ठीक-ठीक पता नहीं. किसी को उनमें इंदिरा गांधी की तस्वीर नजर आ रही है, तो किसी को पार्टी के उत्थान की एकमात्र उम्मीद. हो सकता है कि उनके पार्टी में सक्रिय होने का प्रभाव पड़े भी!

इस घटना पर भाजपा की प्रतिक्रिया भी देखने लायक है. पार्टी के सभी वरीय नेता कांग्रेस के इस निर्णय पर प्रतिक्रिया देने में लगे हैं. कोई कह रहा है कि उनका आना प्रमाण है कि पार्टी को राहुल गांधी पर विश्वास नहीं है और मोदीजी को हराने की क्षमता उनमें नहीं है. एक बड़े नेता ने तो यहां तक कह दिया कि प्रियंका गांधी को एक तरह की मानसिक बीमारी है और इसके कारण राजनीति के लिए सर्वथा अनुपयुक्त हैं.

व्यक्ति और उसके व्यक्तित्व पर केंद्रित यह बहस भारतीय पार्टी व्यवस्था के पतन की ओर इंगित करती है. जनतंत्र में पार्टी व्यवस्था की कल्पना की गयी थी, ताकि उनके द्वारा नागरिकों के हितों को प्रतिनिधित्व मिल सके. लेकिन चेहरों की राजनीति से इतना तो साफ है कि पार्टियां जनता से कट गयी हैं. उनके पार्टी मेनिफेस्टो से जनता प्रभावित नहीं हो पाती है, तो पार्टियां चेहरों के खेल से उनका मनोरंजन करना चाहती हैं और बाजार के सफल ब्रैंड गुरु उनके ब्रैंडिंग के लिए कठिन श्रम करते हैं. ऐसा लगता है जनहित से कटे ये लोग जनता को मूर्ख समझते हैं!

लेकिन भारतीय जनता के सामूहिक चेतना में स्वतंत्रता आंदोलन की यादें भरी हैं, उन्हें सही-गलत की बेहतर पहचान है. चाय पर चर्चा और खाट पर चर्चा की जगह उनको सीधी बात पसंद है. कभी-कभार जुमलों में भले उलझ जाती है जनता. यह समझना जरूरी है कि राजनेता याद रखें कि चेहरों की राजनीति में जनता बार-बार नहीं फंस सकती.

पार्टियों को चाहिए कि अपनी नीतियों को साफ करें. किसानों को बतायें कि उनके हित में क्या नीतियां होंगी. फसल बोने से लेकर बाजार में बेचने तक की नीतियों पर अपना विचार बतायें. खाद, बीज और दवाओं की अंतरराष्ट्रीय कंपनियों की लूट के बारे में पार्टियां क्या सोचती हैं और फसल की न्यूनतम कीमत का उसकी लागत से तुलना में उनकी आर्थिक सुरक्षा की क्या गारंटी है. पार्टियों को मालूम होना चाहिए कि किसान अपने हित-अहित जानते हैं. उनसे सीधी बात कर नीतियों का निर्धारण पार्टियों की ओर उन्हें आकर्षित कर सकती है, न कि चेहरे.

युवाओं को शिक्षा और रोजगार की जरूरत है. दोनों ही प्रमुख पार्टियों ने युवाओं को ठगा है. शिक्षा पर खर्च कम किया गया है. देश की उच्च शिक्षा को गर्त में मिला दिया है. अधिकतर राज्यों में सरकारी महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की हालत खराब है. विज्ञान और समाजशास्त्र दोनों के शोध संस्थाओं की हालत खराब है. छात्रों के वजीफे को घटाया गया है. नौकरियां खत्म कर दी गयी हैं. बाकी विश्वविद्यालयों को तो जाने दें, केंद्रीय विवि की हालत खराब है. दिल्ली विवि में लगभग साढ़े चार हजार शिक्षकों की नौकरियां पक्की नहीं हैं. इस पर कोई ठोस नीति निकालने के बदले आरक्षण का एक मुद्दा उछाल कर, उनके बीच बंटवारे की राजनीति हो रही है. शिक्षा को पूंजीपतियों के हाथों हवाले करके छात्रों के भविष्य से खिलवाड़ किया जा रहा है.

समाज के कमजोर वर्ग और समुदाय जिल्लत की जिंदगी जीने को मजबूर हैं. स्वतंत्रता के बाद जो न्यायपूर्ण समाज की उम्मीद उनमें जगी थी, वह अब डर में बदल गयी है. आये दिन धर्म और जाति के नाम पर हिंसा हो रही है. महिलाएं पहले से ज्यादा असुरक्षित महसूस कर रही हैं. मध्यम वर्ग को एक तरफ हर सुविधा के लिए पूरी तरह बाजार पर निर्भर रहना पड़ रहा है, तो दूसरी तरफ रोजगार की सुरक्षा भी नहीं है.

किसी के राजनीति में आने और नहीं आने से यदि इन विषयों पर कोई फर्क पड़े, तो ठीक है, अन्यथा इस बहस का क्या मतलब? इस बहस से राजनीति का असली चेहरा नजर आने लगा है. इसलिए अब समय आ गया है किसी वैकल्पिक व्यवस्था के बारे में सोचने का, जिसमें जन-भागीदारी ज्यादा हो और नीतियां साफ हों. हो सके तो एक-दो बार से ज्यादा कोई संसद या विधानसभा न जाये, ताकि चेहरों की ब्रैंडिंग की यह राजनीति खत्म हो. जनतंत्र की सुरक्षा का यही एक उपाय है.

> हो सके तो एक-दो बार से ज्यादा कोई संसद या विधानसभा न जाये, ताकि चेहरों की ब्रैंडिंग की यह राजनीति खत्म हो. जनतंत्र की सुरक्षा का यही एक उपाय है.

बोधि वृक्ष

सौभाग्य

एक बार एक महापुरुष के पास उनके दो शिष्य गये. भाग्य बड़ा है या पुरुषार्थ बड़ा है, इसे लेकर दोनों में मतांतर चल रहा था. प्रश्न सुन कर गुरुदेव ने उत्तर दिया- भाग्य में जो है, वह तो होगा ही. किंतु कोई यदि पुरुषार्थ के ऊपर निर्भर कर मेहनत करे, तभी जीवन में नये सौभाग्य का अरुणोदय होगा. इसलिए किसी भी अवस्था में मनुष्य को निश्चिंत होकर बैठे रहना नहीं चलेगा, सर्वदा ही कर्म करते जाना होगा. तुम अपनी निजी चेष्टा के द्वारा व्यक्तिगत प्रयास द्वारा जो करोगे, वह सुकर्म होगा. उसी के परिणामस्वरूप तुम्हारे जीवन में नये सौभाग्य का द्वार खुल जायेगा. इसलिए भाग्य के ऊपर सब कुछ छोड़ कर मनुष्य को हाथ-पैर समेटकर बैठे रहना ठीक नहीं है. वरन् पौरुषता के सहारे मनुष्य को सत्कर्म करते-करते जीवन के पथ पर आगे बढ़ना उचित है. अब बात है कि 'प्रपत्ति' क्या है ? प्रपत्ति शब्द का मूल अर्थ है- इस संसार में जो कुछ हो रहा है; सभी उस ईश्वर की इच्छा से हो रहा है. इसलिए मैं करनेवाला कौन हूं? ईश्वर ही सब कुछ करते हैं, यह तो ठीक है. तब यह भी तो मन में रखना चाहिए कि ईश्वर ने तुम्हें भी काम करने की शक्ति दी है. इसलिए जो मनुष्य ईश्वर के ऊपर निर्भर होकर बाकी सब कुछ छोड़ देंगे, तो फिर क्या होगा. उनके लिए यह भी देखना होगा कि ईश्वर ने उन्हें जो शक्ति दी है, उस शक्ति को काम में लगायें. इसलिए प्रपत्तिवादियों के लिए भी उचित है कि अधिक से अधिकतर कर्मानुष्ठान करें, जिससे ईश्वर खुश हों. क्योंकि ईश्वर प्रदत्त शक्ति का अपव्यवहार करने का अर्थ है- उनमें विरक्ति पैदा करना. मनुष्य के लिए उचित है ईश्वर की इच्छा पूर्ण करने के लिए केवल निःस्वार्थ भाव से कार्य करते जाना. अब, ईश्वर की इच्छा क्या है? उनकी इच्छा है कि प्रत्येक जीव को सामाजिक, अर्थनैतिक, भौतिक, अध्यात्मिक आदि सभी क्षेत्रों में ही मुक्ति मिले. इसलिए प्रत्येक मनुष्य की मुक्ति कराने के लिए अधिक से अधिकतर कार्य करना होगा. और मनुष्य यह जो कार्य करेगा, उस कर्मशक्ति का उत्स क्या है? वह ईश्वर ही हैं.

श्रीश्री आनंदमूर्ति

आपके पत्र

किसानों को पैदावार के सीधे भुगतान से परहेज क्यों

केंद्र सरकार की कथनी और करनी में अंतर स्पष्ट दिखाता है. 'किसानों की आमदनी 2022 में दुगुनी कर देंगे' या 'हमने किसानों की फसलों का समर्थन मूल्य डेढ़ गुना कर दिया, जो कांग्रेस ने सत्तर सालों में नहीं किया, अब वे चैन की नींद सोयेंगे' आदि बातें केवल दिखावा ही साबित हुई हैं. जब हरियाणा में भाजपा की सरकार के सामने किसानों को उनकी फसलों के मूल्य उनके खाते में सीधा ट्रांसफर करने की बात आयी, तो सरकार पीछे हट गयी. सरकार का यह कदम स्पष्ट रूप से किसान विरोधी नीति और नीयत को दर्शाता है. उनसे ऐसी उम्मीद नहीं थी कि वे बोल कर पीछे हट जायेंगे.

निर्मल कुमार शर्मा, गाजियाबाद

देश के भगोड़े कटघरे से दूर क्यों

पंजाब नेशनल बैंक से जुड़े घोटाले में लगभग तेरह हजार करोड़ रुपये की भारी राशि का गबन करने वाला मेहुल चौकसी देश छोड़ कर एंटीगुआ की शरण ली है. इधर, केंद्र सरकार लगातार दावा करती रही कि आर्थिक घोटाले के उन आरोपियों को जल्द ही कटघरे में खड़ा करेगी, जो देश छोड़ भाग गये हैं, मगर सच यह है कि सरकार इस मामले में लाचार नजर आ रही है. बीते हफ्ते चौकसी ने तकनीकी रूप से भारत की नागरिकता छोड़ दी है और अब उसे वापस लाये जाने की उम्मीद धुंधली हो गयी है. एंटीगुआ की सरकार ने भी चौकसी को सौंपने से मना कर दिया है, लेकिन सवाल यह है कि वह भारतीय कानून से इतना दूर कैसे हो गया? चौकसी ने मुंबई के क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय से पुलिस का प्रमाण पत्र हासिल किया, तो उसके लिए जिम्मेदार कौन है? देश से आर्थिक घोटाले के आरोपियों को किसका संरक्षण हासिल था? सरकार को अब कोई दूसरा रास्ता निकलना होगा. सभी भगोड़ों को वापस लाने के साथ ही उनको संरक्षण देने वाले के खिलाफ सख्त कार्रवाई करनी चाहिए.

अभिजीत मेहरा, गोड्डा

सीटेट को मिले जगह

झारखंड में टेट परीक्षा काफी लंबे अंतराल पर होता रहा है. वहीं, झारखंड के केंद्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा (सीटेट) उत्तीर्ण पारा शिक्षकों को यहां की नियुक्तियों में मौका नहीं मिल रहा. हाल में हुई हड़ताल के बाद पारा शिक्षक इस आश्वासन पर वापस काम पर लौटें हैं कि उनके लिए नियुक्ति नियमावली बनायी जायेगी. कहना है कि यदि उक्त नियमावली टेट पास पारा शिक्षकों के लिए बननी है, तो उसमें झारखंड टेट के अलावा सीटेट उत्तीर्ण उत्तीर्ण पारा शिक्षकों को भी शामिल किया जाए, क्योंकि राज्य में सात वर्षों में मात्र दो ही बार शिक्षक पात्रता परीक्षा हुई है, जबकि सीटेट हर छह माह होती रही है. इस परीक्षा को पास करने के बाद भी सरकार की ओर से कोई फायदा नहीं दिया जा रहा है. इसलिए इस राज्य के केंद्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा उत्तीर्ण पारा शिक्षकों को भी राज्य की शिक्षक नियुक्ति नियमावली में स्थान मिलना चाहिए.

निशा, चंद्रपुरा, बोकारो.

कुछ अलग

पांच पूंछों वाला चूहा

संतोष उत्सुक
वरिष्ठ व्यंग्यकार
santoshutsuk@gmail.com

आप सबने पांच पूंछों वाले चूहे के बारे में न कभी सुना होगा न पढ़ा होगा. मेरी पत्नी एक ऐसा चूहा खरीद लायी हैं, जिसका रंग राजनीतिक सफेद और पूंछें पांच हैं. चार पूंछ पढ़ी-लिखी और एक अनपढ़ की तरह कोरी है. पहली पूंछ पर अंकित है, इंडोनेशिया में पैदा किया गया चूहा चौदह सेमी यानी साढ़े पांच इंच लंबा है. इसकी डिजाइन व क्वॉलिटी स्वीडन की प्रसिद्ध व्यापारिक चेन की है, जिसकी दुकानें दुनियाभर में खुल रही हैं. कई तरह के नंबर व मार्क अंकित हैं. यह चूहा उत्कृष्ट भाग्य का मालिक है, जिसके बारे में समझाया गया है कि इसे मशीन में धो सकते हैं. इसे ब्लीच न करें, टंबल ड्राइंग व प्रेस न करें, ड्राइक्लीन न करें. इसे रखने का निम्नतम तापमान भी लिखा है. निर्देशों के अंत में ऑस्ट्रेलिया भी लिखा है.

क्या इंसान के लिए इतने सुझाव हो सकते हैं हमारे यहां? यहां तो कुदरत की नायाब रचना के साथ जी भर कर घृणित सुलूक के प्रावधान हैं. नकली चूहा बेहतर है. दूसरी पूंछ पर नौ भाषाओं में बताया गया है कि सौ प्रतिशत पोलिस्टर से निर्मित इसमें पोलिस्टर फाइबर भरा है. तीसरी पूंछ पर फिर बड़ी दुकान का नाम है और विदेशी भाषा में वर्णन अंकित हैं, फिर लिखा है इसकी इंपोर्टर हांगकांग स्थित कंपनी है. चौथी पूंछ पर कई भाषाओं में सूचना के साथ देशों के नाम हैं. न्यू इंडिया के लिए अंग्रेजी में, भारत में स्थित उसी कंपनी का नाम है. लिखा है कि चूहे की संख्या एक है और यह अमुक दिनांक को पैदा हुआ. इंसान को याद नहीं रहता कब पैदा हुआ और कितनी कीमत है उसकी. एक नकली चूहे की पूंछों पर ही कितने देशों के नाम छपे हुए हैं. कस्टमर केयर के लिए ईमेल व कई फोन नंबर भी दर्ज हैं.

यहां तो इंसानियत संबंधी नंबर खराब ही रहते हैं. एक कंपनी कई देशों में दुकानें खोल ले, तो टैक्स की बचत होती होगी. यहां आधार कार्ड ही आम इंसान की पूंछ है, उसका बाकी परिचय इस चूहे से बेहतर नहीं है. चूहे की तुलना इंसान से नहीं हो सकती, क्योंकि इंसान के बारे में ज्यादा सूचनाएं उपलब्ध नहीं होती. वैसे कितने ही देशों में, खास तौर से हमारे 'मित्र' देश चीन में ही चूहे के अनेक व्यंजन पकाये-खाये जाते हैं. भारत में भगवान गणेश के वाहक चूहे को लड्डुओं का भोग लगाया जाता है. एक प्रसिद्ध मंदिर में सैंकड़ों-हजारों चूहों के बीच माथा टेका जाता है.

चुनाव का मौसम आते ही नेता सब भी वोटरों के सामने इसी तरह से घूमने लगते हैं, लेकिन जीत के बाद वे सब जनता को चूहा बना देना चाहते हैं. इंसान से पहले चूहों पर अनेक प्रयोग करनेवाली व्यवस्था ने आम इंसान को चूहे से बदतर बना दिया है, जिसे अब हमेशा अपने बिल में रहने की हिदायत दी जाती है. मेरी पत्नी ने समझाया कि चूहे की मूल पूंछ छोड़कर बाकी सही तरीके से काट कर, उसे उनकी फोटो के पास रख दें. बाकी पूंछें काट कर, खाली पूंछ पर अपना नाम लिखकर मैंने उनकी बतायी गयी जगह पर रख दिया.

देश दुनिया से

सूडान में सरकार विरोधी प्रदर्शन

अब तक सूडान में दो सफल क्रांतियां हुई हैं. साल 1964 और 1985 में बड़े पैमाने पर हुए विरोध प्रदर्शनों ने सैन्य तानाशाही को उखाड़ फेंका था और असैनिक सरकार को स्थापित किया था. दोनों ही बार, राजनीतिक उथल-पुथल की शुरुआत खार्तूम से हुई थी और वहां के निवासी, बुद्धिजीवी और अभिजात वर्ग ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी. आज एक बार फिर इस देश में क्रांति हो रही है, लेकिन इस बार यह क्रांति खार्तूम से नहीं, बल्कि रिवर नील स्टेट के शहर अटबारा से शुरू हुई है. वस्तुओं के दाम बढ़ने और जरूरी चीजों की कमी के कारण बीते वर्ष 19 दिसंबर को यहां हजारों लोग सड़कों पर उतर आये. अतिशीघ्र यह आंदोलन रोटी और ईंधन से शुरू होकर सरकार को सत्ता से बेदखल करने में तब्दील हो गया और अटबारा में सत्ता पक्ष की इमारत में आग लगा दी गयी. इसके बाद यह आंदोलन तेजी से पूरे देश में फैल गया. स्वतंत्र समाजसेवी समूह अल-मुस्तग्लून (स्वतंत्र) के मुताबिक, प्रदर्शन के पहले ही दिन सरकारी बलों ने 22 प्रदर्शनकारियों को गोली मार दी. मध्य जनवरी तक सूडान के 18 में से 15 राज्य इस विरोध प्रदर्शन में शामिल थे.

ALJAZEERA

कार्टून कोना

साभार : बीबीसी

पोस्ट करें : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001, **फैक्स करें** : 0651-2544006,
मेल करें : eletter@prabhatkhabar.in पर ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है